International Journal of Sanskrit Research

अनन्ता

ISSN Number: 2394-7519
IJSR 2014; 1(1): 02-04
© 2014 IJSR
www.sanskritjournal.com
Received: 18-09-2014
Accepted: 07-10-2014

Bindeshwar Mishra
Associate Professor,
(Sanskrit) Sardar Patel
Mahavidyalay Hariya,
Bujurg Horalapur,
Kushinagar, UP.

Correspondence
Bindeshwar Mishra
Associate Professor,
(Sanskrit) Sardar Patel
Mahavidyalay Hariya,
Bujurg Horalapur,
Kushinagar, UP.

मनुष्य के लिए यज्ञ की उपयोगिता क्यो?

Importance of Yagya in Human Life.

Bindeshwar Mishra

सारांशिका

मानव की उत्पत्ति ही यज्ञो के माध्यम से सम्भव हो सकी है। यज्ञ और मानव के बीच अन्योन्याश्रय सम्बन्ध स्थापित है। मानव के विभिन्न उद्देश्यों की पूर्ति यज्ञो के माध्यम से सम्भव हो सकती है। सामान्यतता अग्नि जलाकर हवन करने और उसमें आहुतियाँ देने को यज्ञ में कहा गया था। परन्तु यज्ञ के अर्थ कुछ और भी है। यज्ञों में ब्रह्म यज्ञ, द्रव्य यज्ञ, तपो यज्ञ, योग यज्ञ, स्वाध्याय यज्ञ, दान यज्ञ, ज्ञान यज्ञ आदि की विवेचना परवर्ती साहित्य में प्राप्त होती है। फिर भी यह कहा जा सकता है कि यज्ञ एक ऐसा विधान है, जिसके द्वारा देवताओं को संतुष्ट कर यजमान अपने अभिलषित आनन्द को प्राप्त कर सकता है, जिसमें मनुष्य के लिए स्वर्ग फल की प्राप्ति यज्ञानुष्ठान का एक मुख्य उद्देश्य होता है। इसके अतिरिक्त यज्ञों के माध्यम से पर्यावरण की पवित्रता, विभिन्न प्रकार के रोगों से छुटकारा तथा उनसे बचने के उपाय किये जा सकते है। यह ध्वनि प्रदूषण, मानसिक, अस्वस्थता, विचार शुद्धि, सद्भावना, शान्ति निरोगता प्रदान करने में सहायक होता है। भैषज्य–यज्ञ से ऋतु परिवर्तन के समय होने वाले दूषित तत्वों को समाप्त करने में सहायता मिलती है। इस प्रकार यज्ञ की महत्ता मानव जीवन में बहुत ही उपयोगी है। चाहे वह आत्मिक शुद्धि हो या प्राकृतिक पवित्रता या देवत्व की प्राप्ति। सभी दृष्टियों से यज्ञो का विधान उपयोगी सिद्ध हुआ है तथा होता है। गीता में स्वंय भगवान कृष्ण ने कहा है कि यज्ञ से बचे हुए अन्न को खाने वाले श्रेष्ठ पुरूष सव पापों से मुक्त हो जाते है।[1]

कूटशब्दः यज्ञानुष्ठान, ऋचाएँ, यवागु, नैसर्गिक चक्र, अहर्निश, समिधा, स्फोट, आत्मसमर्पण, अन्नमय कोश, प्राणयम कोश, मनोमय कोश, विज्ञानमय कोश, आनन्दमय कोश, प्रस्फुटित, प्रज्ञापराध, मृतप्राय

प्रस्तावना

भारतीय संस्कृति में यज्ञानुष्ठान का बहुत बडा महत्व है। हमारे प्राचीन संस्कृति के धरोहर वेद–पुराण, स्मृतियाँ, ब्राह्मण आदि– आदि ग्रन्थ यज्ञों की महत्ता एवं उनके सम्पन्नता का वर्णन किये है। यज्ञ के सन्दर्भ में ऋग्वेद का पहला एवं महत्वपूर्ण अग्निसूक्त के प्रथम मन्त्र में ही लिखा है–

अग्निमीले पुरोहितं यज्ञस्य देवमृत्विजम्।
होतारं रत्नधातमम्।।[2]

इस मन्त्र में अग्नि देवता की स्तुति की गई है। वस्तुतः इस मन्त्र पर सम्यक विचार करने पर यह पता चलता है कि यह मन्त्र भारतीय संस्कृति का परिचायक है। भारतीय संस्कृति में देव और यज्ञ का अन्योन्याश्रय सम्बन्ध स्थापित किया गया है, क्योंकि देव नहीं तो यज्ञ नही, यज्ञ नही तो देवाराधना नही। यज्ञ का मुख्य उद्देश्य ही देव आराधना है। ऋग्वेद के प्रथम मन्त्र में यज्ञ का उल्लेख इस बातम को बताने के लिए पर्याप्त है कि ऋचाओं की रचना से पहले यज्ञों का प्रसार आर्य जीवन में महत्वपूर्ण था और अग्नि देव ही यज्ञ के प्रथम देव थे।

यज्ञ की उपयोगिता– हमारे वेदों में यज्ञ की उपयोगिता का वर्णन बड़े ही विस्तार पूर्वक किया गया है। महर्षि कात्यायन ने अपने सूत्रों में यज्ञ की परिभाषा करते हुए लिखा है कि ''द्रव्य देवतात्यागः'' अर्थात द्रव्य, देवता और त्याग ये तीन यज्ञ के लक्षण है। सामान्यतया– तेल, दूध, दही, यवागु (चावल या जौ की लपसी) सोमलता, भात घी, कच्चे चावल, फल और जल ये दष द्रव्य ही वैदिक यज्ञों में देवताओं के प्रित्यर्थ त्यागने में आते है। देवता आधिदैविक शक्तियाँ है, जो यज्ञ को सर्वथा परव्याप्त करके मन्त्र रूप में अभिव्यक्त होती है। साथ ही मानव जीवन से इसका अभिन्न सम्बन्ध है, क्योंकि यज्ञ वह विधि है, जिसके माध्यम से हम प्राकृतिक संतुलन को बनाये रखने में सहयोग कर सकते है। यज्ञ के माध्यम से पर्यावरण की रक्षा, वायुमण्डल की पवित्रता, विविध प्रकार के रोगों का विनाश, शारीरिक तथा

मानसिक उत्थान का कारक तथा दीर्घायु की प्राप्ति होना सम्भव होता है। यज्ञ के माध्यम से मृदा– प्रदूषण, जल प्रदूषण तथा ध्वनि प्रदूषण आदि को समाप्त किया जा सकता है।

यत् पुरूषेण हविषा देवा यज्ञमतन्वत्।
बसन्तोऽस्यासीदाज्यं ग्रीष्म इध्मः शरद् हवि।।[3]

ऊपर कहा जा चुका है कि यह एक प्रकार की नैसर्गिक प्रक्रिया है। अतः यह अणु परमाणु से प्रारम्भ होकर सूर्य, चन्द आदि तक सर्वन सृष्टि के प्रत्येक कण में प्रत्येक पल स्फोट; म्गचसवेपवदद्ध सदृश यज्ञ हो रहा है। अतः नित्य परिवर्तन हो रहा है, इस प्रकार यह सृष्टिचक्र चलायमान है और इसी कारण इस यज्ञ का सृष्टि चक्र का नाभि; छनबसमनेद्ध कहा गया है।

''अयं यज्ञो भुवनस्य नाभिः''[4]

ऋग्वेद तो इस प्रक्रिया को और भी स्पष्ट रूप में व्यक्त करता है कि यज्ञ के माध्यम से द्युलोक को प्रसन्न किया जाता है तथा द्युलोक वर्षा के माध्यम से पृथ्वी को संतृप्त करता है क्योंकि यज्ञ से मेघ का निर्माण होता है और मेघ से हमें पर्याप्त जल का वर्षा प्राप्त होता है भूमि पर्जन्या जिन्वन्ति जल का वर्षा प्राप्त होता है।[5]
स्वंय भगवान कृष्ण ने भगवदगीता में उपदेश दिया है कि–यज्ञ के माध्यम से देवों को प्रसन्न करो और देवता वर्षा के द्वारा तुम्हे प्रसन्न करे। इस प्रकार के परस्पर आदान–प्रदान से तुम्हारी श्री वृद्धि हो–

देवान् भावयतानेन् ते देवा भावयन्तु वः।
परस्पर भावयन्तः श्रेयः परमवाप्स्यथ।।[6]

यज्ञ की आध्यात्मिक महत्ता– अध्यात्मिक की दृष्टि से भी मनुष्य के लिए यज्ञ अत्यधिक महत्वपूर्ण है। यज्ञ के बाह्य रूप के अतिरिक्त आध्यात्मिक स्वरूप की भी चर्चा कर लेना उचित होगा। यज्ञ पर्यावरण की पवित्रता कारक तथा वृद्धि के साधन के साथ ही परमात्मा का भी एक स्वरूप है। क्योंकि ब्राह्मण ग्रन्थों में इस यज्ञ को ''यज्ञो वै विष्णुः''[7]कहा गया है। यह यज्ञ ब्रह्म (परमात्मा) की प्राप्ति का प्रमुख साधन है। मानव मस्तिष्क में एक प्रकार की आत्मज्योति प्रसुप्तावस्था में विद्यमान है, उसी आत्मज्योति को प्रस्फुटित करना यज्ञ का परम उद्देश्य होता है। मानव की सर्वाङ्गीण शुद्धि उस आत्मज्योति के प्रकाशित होने से ही सम्भव हो सकती है। सर्वाङ्गीण शुद्धि से तात्पर्य देह शुद्धि, इन्द्रिय शुद्धि चिन्त शुद्धि तथा आत्मा की शुद्धि से है। मुख्य तथा यज्ञ के दो कार्य होते है।

1. 'स्वाहा' तथा 'इदं' न मम की भावना जागृत करना।
2. आत्मसमर्पण की भावना जागृत करना।

प्रथम में 'स्वाहा' का तात्पर्य– स्व = स्वार्थ वुद्धि को, आ = पूर्ण रूपेण, हा = त्यागना या छोड़ना। अर्थात स्वार्थ भावना का पूर्णरूपेण त्याग करना। यही भाव 'इदं' न मम का भी है, क्योंकि इसका तात्पर्य है– इसमें मेरा कुछ नही है, तात्पर्य यह है कि निष्काम भाव से कर्मों का अनुष्ठान करना तथा फलाकांक्षा का परित्याग, यह यज्ञ की प्रथम शिक्षा है।
दूसरा आत्मसमर्पण में ब्रह्म के चरणों में पूर्ण रूपेण शरणागत होना या अपने आप को समर्पित करना है।
यज्ञ के अग्नि के प्रज्वलित होने का सम्बन्ध मानव हृदय में आन्य ज्योति के प्रदीप्त होने से बताया गया है। मानव हृदय में जव आत्मज्योति प्रदीप्त होती है तो, उसके भीतर से अज्ञान का आवरण धीरे–धीरे क्षीण होता चला जाता है, और चेतना जागृत होने लगती है। इसी विकास को ग्रन्थकोश के नाम से अभिदित किया गया है। ये पाँच कोश निम्न रूप में बताये गये है– अन्नमयकोश, प्राणमय कोश, मनोमय कोश, विज्ञान कोश, तथा आन्नदमय कोश। मानव हृदय में जब आत्मज्योति प्रस्फुटित होती हैं तब सर्वप्रथम अन्नमय स्थूल शरीर पवित्र होता है, इसके पश्चात प्राजमय कोश शुद्ध हाता है और जब प्राणमय कोश शुद्ध हो जाता है तो व्यक्ति के मनोभावों और विचारों में पवित्रता आती है। इससे मनोमय कोश शुद्ध होता है, और जब मनोमय कोश शुद्ध होता है तो वुद्धि में होता है और इसके परिणाम स्वरूप मानव परमात्मा के साथ आत्मीयता तथा एकात्मकता की अनुभूति करने लगता हैं। इस एकात्मकता की अनुभूति ही आनन्दमय कोश की प्राप्ति है, जो मानव जीवन का चरम उत्कर्ष है। यही यज्ञ का परमार्थिक रहस्य है।

यज्ञ की प्राकृतिक महत्ता– प्राकृतिक महत्ता की दृष्टि से भी यज्ञ विचारणीय है। पद्यनाभ भगवान कृष्ण ने स्वंय गीता में कहा है कि ''यज्ञात् भवति पर्जन्यः''[8] अर्थात यज्ञ से बादलों का निर्माण होता है। क्योंकि जब हम यज्ञ करते हैं तो हवन सामग्रियों के जलने से जो धूम उपर की ओर जाते है। वह सूर्य की किरणों के प्रभाव से विद्युत कण के रूप में परिवर्तित हो जाते है। परिणाम स्वरूप घनीभूत होकर मेघ का रूप धारण कर लेते है।
स्वामी प्रत्यगात्मानन्द कृत 'वेद व विज्ञान नामक पुस्तक में लिखा है कि ''वैज्ञानिक दृष्टि से किसी भी द्रव्य का कण ;चंतजपबसमद्ध यदि थोड़ी सी तदित शक्ति (positive) या (Negative Electricity) वहन करते हुए घूमे तो वह (charged particle) ही पवद (आयन) होता है। किसी भी तरल या वायवीय पदार्थ के कण यदि इसी प्रकार के वाहन वन जायें तो उस तरल या वायवीय पदार्थ को पवदप्रमक (तदित शक्ति युक्त) कहा जायेगा।[9] यज्ञ में द्रव्य पदार्थ जलकर द्रव्य गैस वनकर उपर के तरफ उठता है और उसके सूक्ष्म कण पवदे तदित शक्तियुक्त ;बींतहमकद्ध हो जाते है तथा उसमें यदि आकाश में उड़ते धूल के कण सवंमित हो जाते है तो ये आयन पवदे उसमें मिल जाते है। हवन में हुत द्रव्य कुछ अंश में बनकर उपर उठता है। उस हुत द्रव्य में से कुछ अंश गैस बनकर अग्नि शिख से निकलते है। इनमें तीव्र ताप और रासायनिक संयोग विद्यमान है। इसका परिणाम यह होता है। कि हुए द्रव्य का गैस तदित शक्तियुक्त पवदपेमक हो जायेगा। अग्नि को त्यागकर बहुत दूर जाने पर भी तथा ठण्डा जो जाने पर भी यह गैस कण अपनी तदित शक्ति का त्याग नहीं करता है। यह ;पवदेद्ध धूमकणों या धूलकणों के साथ संयोगावस्था में उपर जाते है। ये सब; बींतहमक चंतजपबसमेद्ध उपर उठकर वायु के जलीय वाष्प को जमाकर मेघ बना देते है।
यज्ञ की अन्य उपयोगिता– उपर्युक्त महत्वपूर्ण कड़ी के साथ ही पारम्परिक यज्ञ के कुछ महत्वपूर्ण लाभ निम्नलिखित है–

1. पारस्परिक यज्ञ पर्यावरण के सन्तुलन बनाये रखने मुं अत्यन्त शीघ्र सहायक होते है।
2. यह प्रज्ञापराध के कारण मानसिक प्रदूषण को रोकने में सहायक सिद्ध होता है। इस यज्ञ के माध्यम से शिवसंकल्प, विचार शुद्धता, सद्भावना शान्ति और आरोग्यता प्रदान करके मानसिक और वौद्धिक रोगों को समाप्त किया जा सकता है।
3. यज्ञों में मन्त्र पाठ का सस्वर वाचन ध्वनि प्रदूषण को रोकने मूं कुछ अंश तक सहायक करता है।
4. अग्निहोन्न से कुछ इस प्रकार के गैसों का उत्सर्जन होता है, जो पर्यावरण को पवित्र करती है तथा प्रदूषण को समाप्त करती है। जैसे– ;म्जीलसमदम वगपकमए चतवचलसमदमद्ध
5. यज्ञ में प्रयुक्त होने वाले द्रव्य पदार्थों (चीनी शक्कर आदि) में वायु को पवित्र करने की असाधारणा क्षमता है, इसके धूम से क्षयरोग चेचक, हैजा आदि संक्रामक बिमारियों के कीटाणु समाप्त होते है।
6. भैषज्य– यज्ञ ऋतु परिवर्तन के समय होने वाले दूषित तत्वों को समाप्त करते है।[10]
7. अथर्ववेद में कहा गया है कि यज्ञ के अनुष्ठान से मृत प्राय व्यक्ति को भी बचाया जा सकता है।[11] साथ ही यक्ष्मा, ज्वर, गठिया, कष्ठमाला आदि रोगों को भी समाप्त किया जा सकता है।[12]

निष्कर्ष– निष्कर्ष रूप में यह कहा जा सकता है कि वैदिक यज्ञ विधान मानव मात्र के कल्याणार्थ किया गया है, जिसका अनुकरण व अनुष्ठान कर मानव समाज अपने जीवन तथा जीवन से सम्बन्धित विभिन्न प्रकार के उद्देश्यों का प्राप्त कर सकता है। क्योंकि मानव के मूल में यह यज्ञ ही थे जिससे उसकी उत्पत्ति सम्भव हो सकी। साथ ही मनुष्य इन यज्ञों के माध्यम से केवल अपने जीवन के अभिलषित अभिप्राय को पूर्ण ही नहीं करता अपितु उसके द्वारा परमात्मा के अनेक रूपों का समन्वय करता हुआ उसकी एकता का साक्षात्कार करता है। अतः सृष्टि और इसके संचालन का भारतीय प्रतीक 'यज्ञ' ही है।

सन्दर्भ ग्रन्थ–

1. भगवद्गीता 3.13
2. ऋग्वेद 01.01.01
3. ऋग्वेद 10.09.06
4. यजुर्वेद 23.62
5. ऋग्वेद 01.164.59
6. भगवद्गीता 3.11
7. शतपथ ब्राह्मण
8. भगवद्गीता 3.14
9. वेद विज्ञान पृ. 218–222
10. गोपथ ब्राह्मण 2.1.–19
11. अथर्वेद 3.11.2
12. अर्थर्वेद 3.11.1